

भारत के सर्वोच्च न्यायालय में

दीवानी अपीलीय अधिकार क्षेत्र

2024 की दीवानी अपील संख्या 6351

(2023 की एस. एल. पी. (सी) संख्या 10492 से उद्भूत)

धरणीधर मिश्रा (डी) और एक अन्य

अपीलकर्तागण

बनाम

बिहार राज्य और अन्य

उत्तरदातागण

आदेश

भूमि अधिग्रहण अधिनियम-धारा 4-क्षतिपूर्ति-अपीलार्थी की भूमि वर्ष 1977 में अधिग्रहित की गई और कब्जा कर लिया गया, लेकिन राज्य ने मुआवजे का कोई पुरस्कार पारित नहीं किया और मामले को लंबित रखा- उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने रिट याचिका को इस आधार पर खारिज कर दिया कि याचिका अधिग्रहण के बयालीस साल की अवधि के बाद दायर की गई थी, जबकि अपीलीय अदालत ने अपीलार्थी को मुआवजे की राशि के वितरण के लिए संबंधित प्राधिकारी के समक्ष एक आवेदन दायर करने के लिए कहा- *अभिनिर्धारित-हालांकि* संविधान (44 वां संशोधन) अधिनियम 1978 द्वारा संपत्ति का अधिकार एक मौलिक अधिकार नहीं रहा। लेकिन एक कल्याणकारी राज्य में एक मानवाधिकार बना रहा, और संविधान के अनुच्छेद 300-ए के तहत एक संवैधानिक अधिकार बना हुआ है।-राज्य कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार किसी नागरिक को उसकी संपत्ति से बेदखल नहीं कर सकता है और मुआवजे का भुगतान करने की बाध्यता, हालांकि अनुच्छेद 300-ए में स्पष्ट रूप से शामिल नहीं है, उस अनुच्छेद में अनुमान लगाया जा सकता है-कार्रवाई के निरंतर कारण के मामले में देरी और अड़चनें नहीं उठाई जा सकती हैं या यदि न्यायालयों द्वारा सारवान न्याय करने के लिए अपने संवैधानिक क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने के लिए कोई सीमा अवधि निर्धारित नहीं की गई है - विवादित आदेश को दरकिनार किया गया तथा मामले को नए सिरे से विचार करने के लिए उच्च न्यायालय को भेजा गया।

भारत के सर्वोच्च न्यायालय में

दीवानी अपीलीय अधिकार क्षेत्र

2024 की दीवानी अपील संख्या 6351

(2023 की एस. एल. पी. (सी) संख्या 10492 से उद्भूत)

धरणीधर मिश्रा (डी) और एक अन्य

अपीलकर्तागण

बनाम

बिहार राज्य और अन्य

उत्तरदातागण

आदेश

- 1 प्रथम याचिकाकर्ता के कानूनी उत्तराधिकारियों को अभिलेख पर लाने के लिए प्रतिस्थापन के लिए आवेदन की अनुमति है। कारण शीर्षक को तदनुसार संशोधित किया जाए।
- 2 अनुमति दी गई।
- 3 यह अपील पटना में उच्च न्यायालय क्षेत्राधिकार द्वारा 2019 के दीवानी रिट क्षेत्राधिकार मामले संख्या 8408 में 2019 की लेटर्स पेटेंट अपील संख्या 997 में दिनांक 7 फरवरी 2023 को पारित एक आदेश से उत्पन्न होती है, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय क्षेत्राधिकार की खंड पीठ ने लेटर्स पेटेंट अपील का निपटारा करते हुए अपीलार्थी को रुपये 4,68,099 पर निर्धारित भूमि के मूल्य के वितरण के लिए संबंधित प्राधिकारी के समक्ष एक उचित आवेदन दायर करने के लिए कहा।
- 4 इस अपील को जन्म देने वाले तथ्यों को संक्षेप में निम्नानुसार प्रस्तुत किया जा सकता है:
बिहार राज्य द्वारा अधिसूचित राज्य राजमार्ग के निर्माण के उद्देश्य से भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 4 के तहत वर्ष 1976 में एक अधिसूचना जारी की गई थी। इसमें

अपीलार्थी के स्वामित्व वाली भूमि को ऊपर उल्लिखित धारा 4 अधिसूचना में शामिल किया गया था। 1977 में किसी समय अपीलार्थी की भूमि का अधिग्रहण किया गया था। हालांकि, यह अपीलार्थी का मामला है कि उसे मुआवजे के रूप में एक भी पैसा नहीं दिया गया था।

- 5 अपीलार्थी ने मुआवजे के भुगतान के लिए वर्ष 1977 में अपनी भूमि के अधिग्रहण और कब्जा किए जाने के तुरंत बाद राज्य सरकार को संबोधित एक उचित आवेदन को प्राथमिकता दी। यह अपीलार्थी का मामला है कि राज्य ने मुआवजे का कोई पुरस्कार भी पारित नहीं किया और मामले को अधर में लटका दिया।
- 6 वर्ष बीतते गए और अपीलकर्ता अधिकारियों से एक उचित निर्णय पारित करने और मुआवजे के लिए राशि का भुगतान करने का अनुरोध करता रहा।
- 7 चूंकि प्रत्यर्थियों ने अपीलार्थी की बात पर ध्यान नहीं दिया, इसलिए उनके पास पटना उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका दायर करने के अलावा कोई अन्य विकल्प नहीं बचा था। रिट याचिका की सुनवाई एक विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा की गई थी और 19 जुलाई 2019 के आदेश द्वारा इसे केवल इस आधार पर खारिज कर दिया गया था कि अधिग्रहण के ब्यालीस साल की अवधि के बाद याचिका दायर की गई थी। रिट याचिका को खारिज करते हुए, विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह भी कहा कि अपीलकर्ता अपनी भूमि के अधिग्रहण के संबंध में कोई कागज या अधिसूचना मुआवजे के भुगतान के उद्देश्य जमा करने में विफल रहा है।
- 8 विद्वत एकल न्यायाधीश द्वारा उसकी रिट याचिका को अस्वीकार करने के आदेश से असंतुष्ट होकर, अपीलार्थी अपील में गया। एक खंड पीठ द्वारा निम्नलिखित शर्तों में अपील का निपटारा किया गया:

“राज्य की ओर से पूरक हलफनामे की एक हार्ड कॉपी पूरे बोर्ड में दाखिल की गई है।

इसे रिकॉर्ड में लिया जाए।

राज्य के इस स्पष्ट रुख को ध्यान में रखते हुए कि अपीलकर्ताओं की भूमि का उपभोग कर लिया गया था और राज्य अपीलकर्ताओं को क्षतिपूर्ति करने के लिए तैयार है, इस अपील में निर्णय लेने के लिए कुछ भी नहीं बचा है।

अपीलार्थियों को सूचित किया गया है कि भूमि का मूल्य रुपये 4,68,099-आंका गया है।

अपीलार्थियों को केवल इतना करना है कि वे संबंधित प्राधिकारी के समक्ष एक आवेदन दायर करें कि उनके और उनके पुत्र बीच राशि का बंटवारा कैसे किया जाएगा।

यह उम्मीद की जाती है कि राज्य प्राधिकरण द्वारा इस संबंध में निर्णय बिना किसी देरी के लिया जाएगा क्योंकि यह मामला पहले ही पांच दशक पुराना हो चुका है।

याचिका का निपटारा कर दिया गया है। "

- 9 अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री धरणीधर झा ने समर्पित किया कि राज्य इस तथ्य को स्वीकार करता है कि अपीलार्थी की भूमि का अधिग्रहण किया गया था और उसी उद्देश्य के लिए उपयोग किया गया था जिसके लिए अधिग्रहण किया गया था। वह समर्पित करेगा कि यदि राज्य अपने मुवक्किल की भूमि का अधिग्रहण करना उचित समझता है, तो राज्य की ओर से मुआवजे की राशि निर्धारित करने के लिए एक उचित निर्णय पारित करना अनिवार्य है। वह समर्पित करें कि अपीलकर्ता अपने अधिकारों का दावा करने में सुस्त था का मामला नहीं है, बल्कि संबंधित अधिकारियों से मुआवजे के लिए राशि निर्धारित करने और उसी का भुगतान करने का अनुरोध करता रहा।
- 10 दूसरी ओर, बिहार राज्य की ओर से पेश विद्वान वकील ने कहा कि उच्च न्यायालय द्वारा विवादित आदेश पारित करने में कोई त्रुटि, कानून की किसी भी त्रुटियों के बारे में नकारते हुए किया गया नहीं कहा जा सकता है। वह प्रस्तुत करेगा कि यह विवाद में नहीं है कि अपीलार्थी

की भूमि का अधिग्रहण सार्वजनिक उद्देश्य के लिए किया गया था, लेकिन साथ ही, यह अपीलार्थी का कर्तव्य था कि वह कानून के अनुसार उचित मुआवजा निर्धारित करने के उद्देश्य से मामले को आगे बढ़ाए।

- 11 पक्षों की ओर से उपस्थित विद्वान वकील को सुनने और अभिलेख पर सामग्री को देखने के बाद, एकमात्र सवाल जो हमारे विचार के लिए आता है वह यह है कि क्या उच्च न्यायालय ने विवादित आदेश पारित करने में कोई त्रुटियां की हैं।
- 12 हम इस तथ्य पर ध्यान देते हैं कि उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने केवल देरी के आधार पर रिट याचिका को अस्वीकार करना उचित समझा और अपील में, अपीलीय न्यायालय ने अपीलकर्ता से मुआवजे की राशि के वितरण के लिए संबंधित प्राधिकारी के समक्ष आवेदन दायर करने के लिए अपील का निपटारा किया।
- 13 हम दो बातों पर ध्यान देते हैं: सबसे पहले, उच्च न्यायालय ने अपने विवादित आदेश में कहा है कि अपीलार्थी को भूमि की कीमत रु. 4,68,099 आंका जाने के बारे में सूचित कर दिया गया है। हम यह समझने में विफल हैं कि यह आंकड़ा किस आधार पर आया है; किस समय इस राशि का आकलन किया गया; और ऐसी राशि के आकलन का आधार क्या है। दूसरा, उच्च न्यायालय के आदेश को गैर-भाषी आदेश कहा जा सकता है। यद्यपि इस स्तर पर, बिहार राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान वकील ने समर्पित किया कि यह पक्षों की सहमति से प्राप्त एक आदेश था, फिर भी इस बात का संकेत देने के लिए कुछ भी नहीं है कि अपीलार्थी द्वारा इस तरह का आदेश पारित करने के लिए कोई सहमति दी गई थी।
- 14 पहली बात जो उच्च न्यायालय को राज्य से पूछनी चाहिए थी, वह यह है कि वर्ष 1977 में ही, जिस वर्ष भूमि का अधिग्रहण किया गया था, मुआवजे के लिए पुरस्कार क्यों पारित नहीं किया गया था। उच्च न्यायालय को यह पूछना चाहिए था कि राज्य को रुपये 4,68,099 का आंकड़ा निर्धारित करने में बयालीस साल क्यों लगे। उच्च न्यायालय को राज्य से मुआवजे की राशि के निर्धारण का आधार भी पूछना चाहिए था। यह कानून की एक अच्छी तरह से

स्थापित स्थिति है कि मुआवजे के लिए पुरस्कार पारित होने के बाद, यदि भूमि का मालिक राशि से संतुष्ट नहीं है, तो वह इसे बढ़ाने के लिए अपील भी दायर कर सकता है। उच्च न्यायालय ने इस आधार पर आगे बढ़ते हुए कहा कि रुपये 4,68,099 की राशि का आकलन किया गया है और अब यह अपीलार्थी पर है कि वह एक उचित आवेदन दायर करे और अपने पक्ष में राशि वितरित कराये।

- 15 हम अपील का निपटारा करते समय उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण से आश्वस्त नहीं , बल्कि निराश हैं।
- 16 इस मुकदमे में कई मुद्दे उठ रहे हैं और उच्च न्यायालय को राज्य से यह पूछने के लिए थोड़ी मेहनत करनी चाहिए थी कि उसने अपीलार्थी को एक स्थान से दूसरे स्थान पर भागने हेतु क्यों मजबूर किया गया यह दुखद है कि अपीलार्थी का मुआवजा प्राप्त करने के अपने अधिकार के लिए लड़ते हुए निधन हो गया। अब अपीलार्थी के कानूनी उत्तराधिकारी इस मुकदमे को आगे बढ़ा रहे हैं।
- 17 1976 में, जब अपीलार्थी की भूमि का अधिग्रहण किया गया, तो संपत्ति का अधिकार संविधान के भाग III में अनुच्छेद 31 द्वारा गारंटीकृत एक मौलिक अधिकार था। अनुच्छेद 31 निजी संपत्ति के अधिकार की गारंटी देता है, जिसे कानून की उचित प्रक्रिया और न्यायसंगत और उचित मुआवजे के बिना वंचित नहीं किया जा सकता है।
- 18 संविधान (चौआलिसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा संपत्ति का अधिकार एक मौलिक अधिकार नहीं रह गया, हालांकि, यह एक कल्याणकारी राज्य में एक मानवाधिकार और संविधान के अनुच्छेद 300-ए के तहत एक संवैधानिक अधिकार बना रहा। अनुच्छेद 300-ए में प्रावधान है कि किसी भी व्यक्ति को कानून के अधिकार के अलावा उसकी संपत्ति से वंचित नहीं किया जाएगा। कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार के अलावा राज्य किसी नागरिक को उसकी संपत्ति से बेदखल नहीं कर सकता है। क्षतिपूर्ति का भुगतान करने की बाध्यता, हालांकि अनुच्छेद 300-ए में स्पष्ट रूप से शामिल नहीं है, उस अनुच्छेद में अनुमान

लगाया जा सकता है। [देखिए: के. टी. प्लांटेशन (पी) लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य, (2011) 9 एससीसी 1]

- 19 हिंदुस्तान पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम डेरियस शापुर चेनाई जिसे (2005) 7 एस. सी. सी. 627 में प्रतिवेदित किया गया इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि:

“6. ... संविधान के अनुच्छेद 300-ए में निहित प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, राज्य अपनी "प्रतिष्ठित क्षेत्र" की शक्ति का प्रयोग करते हुए किसी व्यक्ति के संपत्ति के अधिकार को प्राप्त करके उसमें हस्तक्षेप कर सकता है, लेकिन ऐसा किसी सार्वजनिक उद्देश्य के लिए होना चाहिए और उसके लिए उचित मुआवजे का भुगतान किया जाना चाहिए।”

(जोर दिया गया)

- 20 एन. पद्मम्मा बनाम एस. रामकृष्ण रेड्डी ने (2008) 15 एस. सी. सी. 517 में रिपोर्ट किए गए मामले में इस न्यायालय ने कहा कि:

“21. यदि संपत्ति का अधिकार एक मानव अधिकार के साथ-साथ एक संवैधानिक अधिकार कानून के अनुसार के अलावा कुछ नहीं समझा जा सकता है। संविधान का अनुच्छेद 300-ए इस अधिकार की रक्षा करता है। अधिनियम के प्रावधान जो इस तरह के अधिकार से वंचित करने की मांग करते हुए भारत के संविधान के अनुच्छेद 300-ए के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, अधिकार का सख्ती से अर्थ लगाया जाना चाहिए।”

(जोर दिया गया)

- 21 दिल्ली एयरटेक सर्विसेज (पी) लिमिटेड बनाम यू.पी. राज्य जो (2011) 9 एस सी सी 354 में प्रतिवेदित हुआ। इस न्यायालय ने निम्नलिखित शब्दों में संपत्ति के अधिकार को एक बुनियादी मानव अधिकार के रूप में मान्यता दी:

“30. प्रत्येक न्यायशास्त्र और विभिन्न राजनीतिक विचारकों द्वारा यह स्वीकार किया जाता है कि कुछ मात्रा में संपत्ति का अधिकार अत्याचार और सरकार के आर्थिक उत्पीड़न के खिलाफ एक अनिवार्य सुरक्षा है। जेफरसन का विचार था कि संपत्ति के समर्थन के बिना स्वतंत्रता लंबे समय तक नहीं रह सकती है। “संपत्ति को सुरक्षित किया जाना चाहिए, अन्यथा स्वतंत्रता नहीं रह सकती” जॉन एडम्स की राय थी। वास्तव में यह दृष्टिकोण कि संपत्ति ही वह आधार है जिसे संरक्षित किया जाना चाहिए, यदि अन्य संवैधानिक मूल्यों को फलना-फूलना है जो राजनीतिक विचारकों और न्यायविदों के बीच आम सहमति है। ”

(जोर दिया गया)

22 1995 में *जिलुभाई नानभाई खाचर बनाम गुजरात राज्य* का मामला जो 1995 पूरक (1) एस. सी. सी. 596 में प्रतिवेदित हुआ इस न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:

48. ... दूसरे शब्दों में, अनुच्छेद 300-ए केवल राज्य की शक्तियों को सीमित करता है कि किसी भी व्यक्ति को उसकी संपत्ति से वंचित नहीं किया जाएगा सिर्फ कानून के अधिकार से। कानून की मंजूरी के बिना कोई अभाव नहीं होना चाहिए। अनुच्छेद 300-ए के तहत किसी अन्य तरीके से वंचित होना अधिग्रहण या कब्जा लेना नहीं है। दूसरे शब्दों में, अगर कोई कानून नहीं है, तो कोई अभाव नहीं है।

(जोर दिया गया)

23 (2013) 1 एस. सी. सी. 353 में रिपोर्ट किए गए *तुकाराम काना जोशी बनाम एम.आई.डी.सी.* में, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि राज्य को अधिग्रहण, मांग या किसी अन्य अनुमेय वैधानिक तरीके की प्रक्रिया का पालन करना चाहिए। कानून के शासन द्वारा शासित एक कल्याणकारी राज्य होने के नाते राज्य अपने लिए संविधान द्वारा प्रदान की गई स्थिति से परे का दर्जा नहीं ले सकता है।

- 24 हरियाणा राज्य बनाम मुकेश कुमार जो (2011) 10 एस. सी. सी. 404 में प्रतिवेदित किया गया इस न्यायालय ने कहा कि संपत्ति के अधिकार को अब न केवल एक संवैधानिक या वैधानिक अधिकार माना जाता है, बल्कि एक मानव अधिकार भी माना जाता है। मानवाधिकारों को व्यक्तिगत अधिकारों जैसे आश्रय का अधिकार, आजीविका, स्वास्थ्य, रोजगार आदि के दायरे में माना गया है। मानवाधिकारों ने एक बहुआयामी आयाम प्राप्त किया है।
- 25 हमें यह कहते हुए खेद है कि उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने राज्य से यह पूछताछ करना भी उचित नहीं समझा कि क्या अपीलार्थी को न्यायसंगत और उचित मुआवजा दिया गया था या नहीं। विद्वान एकल न्यायाधीश ने केवल देरी के आधार पर रिट याचिका को खारिज कर दिया। जैसा कि इस न्यायालय द्वारा विद्या देवी बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य मामले में जो (2020) 2 एस. सी. सी. 569 में प्रतिवेदित हुआ बताया गया है, किसी निरंतर कारण के मामले में देरी एवं अड़चने नहीं उठाई जा सकती है या यदि परिस्थितियां न्यायिक अंतरात्मा को झकझोर देती हैं। विलम्ब न्यायिक विवेकाधिकार का विषय है, जिसका प्रयोग मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में विवेकपूर्ण और यथोचित रूप से किया जाना चाहिए। जैसा कि इस न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है, यह मौलिक अधिकारों के उल्लंघन और दावा किए गए उपचार और कब और कैसे देरी हुई, इस पर निर्भर करेगा। पर्याप्त न्याय करने के लिए अपने संवैधानिक अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने के लिए अदालतों के लिए निर्धारित सीमा की कोई अवधि नहीं है।
- 26 ऐसे मामले में जहां न्याय की मांग इतनी सम्मोहक है, एक संवैधानिक न्यायालय न्याय को बढ़ावा देने न की उसे परजित करने के लिए, अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करेगा। [देखिए: पी.एस. सदाशिवस्वामी बनाम टी. एन. राज्य (1975) 1 एस. सी. सी. 152]

27 (2013) 1 एस. सी. सी. 353 में रिपोर्ट किए गए तुकाराम काना जोशी बनाम एम. आई. डी. सी. में, इस न्यायालय ने इसी तरह की तथ्य स्थिति पर विचार करते हुए निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:

“11. ऐसे अधिकारी हैं जो कहते हैं कि देरी और विलंब दावा करने के अधिकार को समाप्त कर देते हैं। इनमें से अधिकांश प्राधिकरण सेवा न्यायशास्त्र, दशकों पहले उनके साथ की गई गलती के लिए मुआवजे का अनुदान, वैधानिक बकाया की वसूली, शैक्षिक सुविधाओं के लिए दावा और इसी तरह के मामलों की अन्य श्रेणियों आदि से संबंधित हैं। हालाँकि, यह सच है कि कुछ प्राधिकरण हैं जो निर्धारित करते हैं कि देरी एवं अड़चने एक नागरिक को उपचार की मांग करने से रोकते हैं, भले ही संविधान के अनुच्छेद 32 या 226 के तहत उसके मौलिक अधिकार का उल्लंघन किया गया हो, लेकिन वर्तमान मामला पूरी तरह से एक अलग परिदृश्य से संबंधित है। राज्य के अधिकारियों ने कानून की मंजूरी के बिना अपीलार्थियों की भूमि पर कब्जा कर लिया। अपीलकर्तों ने बार-बार क्षतिपूर्ति हेतु लाभ प्रदान करने के लिए कहा था। राज्य को या तो अधिग्रहण, या मांग, या किसी अन्य अनुमेय वैधानिक तरीके के लिए निर्धारित प्रक्रिया का पालन करना चाहिए।”

(जोर दिया गया)

28 ऊपर उल्लिखित ऐसी परिस्थितियों में, हमारा विचार है कि हमें उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित आदेश को दरकिनार कर देना चाहिए और मामले को नए सिरे से विचार के लिए भेज देना चाहिए।

29 परिणामस्वरूप, यह अपील सफल हो जाती है और इसके द्वारा इसकी अनुमति दी जाती है। उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित आदेश को दरकिनार कर दिया जाता है और मामले को नए सिरे से विचार के लिए उच्च न्यायालय को भेज दिया जाता है। 2019 की लेटर्स

पेटेंट अपील संख्या 997 को उसकी मूल फाइल में बहाल कर दिया गया है। उच्च न्यायालय दोनों पक्षों को सुनेगा और इस आदेश में इस न्यायालय द्वारा जो टिप्पणी की गई है, उसके अनुसार एक उचित आदेश पारित करेगा। हम उच्च न्यायालय से आज से दो महीने की अवधि के भीतर मामले पर फैसला करने का अनुरोध करते हैं।

30 लंबित आवेदन, यदि कोई हों, का निपटारा कर दिया जाता है।

.....न्यायाधीश

[जे बी पारदीवाला]

.....न्यायाधीश

[मनोज मिश्रा]

नई दिल्ली

13 मई, 2024

सीकेबी

खण्डन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।